VOL- VII ISSUE- V MAY 2020 PEER REVIEW e-JOURNAL IMPACT FACTOR 6.293 ISSN 2349-638x

हिंदी उपन्यासों में चित्रित जातीय विषमता
(छप्पर,मिट्टी की सौगंध, मोरीकी ईट,उस शहर तक के संदर्भ में)

डॉ. संजय मारूती कांबळे
तु.कृ.कोलेकर कला एवं वाणिज्य
महाविद्यालय नेसरी
तहसील. गडहिंग्लज, जि. कोल्हापुर

वस्तुत: वर्ण–व्यवस्था ने जाति व्यवस्था को जन्म दिया है। फलस्वरूप उच्च वर्णीय लोग निम्न जाति के लोगों को छुआ–छूत के नाम पर बहिष्कृत करते हैं। भारतीय समाज में धर्म, जाति, तथा गोत्र को महत्व दिया जाता है। ग्रामीण व्यवस्था में जातीय विषमता ज्यादह दिखाई देती है। अपने आपको श्रेष्ठ मानने की प्रवृत्ति तथा जातीय अहंकार के कारण जातीय भेद–भाव को बढ़ावा मिल रहा है। डॉ. देवेश ठाकुर कहते हैं– "व्यक्ति, समाज जातिगत आधार पर अलग–अलग समूहों में विभाजीत हुआ। परस्पर व्देष,ईर्ष्या और शत्रुता के भाव को बढ़ाता हुआ राष्ट्रीय शक्ति, एकता और उदात्त मानवी मन के आदर्शों को धूमिल कर रहा है।"[१] स्पष्ट है की लोग जाँति–पाँति का ध्यान अभी तक इतना रखते हैं कि गरीब से गरीब व्यक्ति भी इसके पालन में अपने आप पर गर्व महसूस करता है। इस प्रवृत्ति का बारीकी से विवेचन हिंदी उपन्यासकारों ने किया है। जयप्रकाश कर्दम के 'छप्पर', प्रेम कपाडिया के 'मिट्टी की सौगंध', मदन दीक्षित के 'मोरी की ईट' तेजिंदर के 'उस शहर तक' आदि उपन्यासों में जातीय विषमता का चित्रण प्रखरता से मिलता है।

जयप्रकाश कर्दम के 'छप्पर' उपन्यास का चंदन अपने नेतृत्व में दलित समाज द्वारा आंदोलन करता है। आंदोलन का मुख्य उद्देश्य ऊँच – निच जाति भेद मिटाकर सभी जगह समानता लाना है। काणे पंडित कलक्टर साहब को दलित समाज के आंदोलन के बारे में पुछताछ करते हैं, तब कलक्टर साहब कहते हैं, कि दलित समाज सभी जगह समानता चाहते हैं। जाति और वर्ग की दीवारें खत्म करना चाहते हैं। ऊँच–नीच, गरीब–अमीर, सबको एक स्तर पर लाना चाहते है। इस पर काणे पंडित कहता है – "वे मिटाएँगे सबका भेद। ऐसा कैसा हो सकता है, कैसे बराबर हो सकता हैं, ब्राह्मण और भंगी सब? यह कोई उनकी बनाई व्यवस्था है कि लिया और खत्म कर दिया। सनातन व्यवस्था है, यह तो रहेगी ही।"[२] उक्त कथन से स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज में आज भी जातिभेद की दीवारें मजबूत हैं। जो आंदोलन जैसे उग्र हाथियार से भी टूटना मुश्किल है।

प्रेम कपाड़िया के 'मिट्टी की सौगंध' उपन्यास के विजेंद्र सिंह के पिता जमींदार मदन सिंह अछूत शीला पर बलात्कार करके उसकी इज्जत लुटाता है, लेकिन बाप के जुल्म से शीला को बचाने के लिए विजेंद्र उसके साथ अंतर्जातीय विवाह करना चाहता है, परंतु उसकी दादी माँ जमींदार खानदान का एहसास दिलाती है– "हमारा खानदान जमींदारों का है... हमारे खानदान के लडके ऐयाशी तो बड़ें शौक से कर सकते हैं, लेकिन ऐयाशी के लिए चुनि गई लड़की या औरत जमींदार घराने की बहू नही बनाई जा सकती है क्योंकि जो लोग हमारे जुते बनाते हो... हमारे घरों की गंदगी साफ करते हों... वे हमारे लिए अछूत है...और एक अछूत हमारा रिश्तेदार कैसे बन सकता है?"[३] स्पष्ट है कि दादी माँ का उक्त कथन जातीय भेदा–भेद का समर्थन करता है। प्रस्तुत उपन्यास की शीला रामनगर बाजार में जाते समय रोड पार करते वक्त तांगे से बचने के चक्कर में ठाकुर विजेंद्र सिंह की जीप से बाल–बाल बच जाती है। इस स्थिति में सवर्ण लाला

बनिया दुकानदार ठाकुर विजेंद्र सिंह को कहता है– ''अच्छा हुआ बच गई.... वर्ना पुलिस का नया थानेदार तंग करता.... वह बडा दबंग है.... अनुसूचित जाति का है...ऊपर से पुलिस की ऐंठ।''[४] स्पष्ट है कि दलित इन्स्पेक्टर जगजीवनराम के अच्छे कार्यो कों भी लाला बनिया जातीयता की निगाह से देखता है।

प्रस्तुत उपन्यास का विजेंद्र सिंह दलित शीला के साथ अंतर्जातीय विवाह करता है। इस स्थिति में उसका पिता जमींदार मदन सिंह शीला की हत्या करने हेतु गुंडों द्वारा विजेंद्र सिंह के घर पर हमला करता है, परंतु पुलिस तत्परता से शीला को बचाती है और अदालत मदन सिंह को दस वर्ष की सजा देती है। न्यायाधीश सजा देने से पहले मदन सिंह को अपने बचाव में बयान देने की बात करता है, तब मदन सिंह कहता है– ''सर! मै हर सजा पाने को तैयार हूँ लेकिन एक हरिजन औरत मेरे घर की बहु बने मै यह सहन नही कर सकता... मै मर सकता हूँ लेकिन एक दलित औरत को अपनी बहू स्वीकार नहीं कर सकता।''[५] स्पष्ट है की मदन सिंह मर मिटने के लिए तैयार है, मगर इन्सान के साथ इन्यानियत का व्यवहार करने के लिए तैयार नही है।

मदन दीक्षित के 'मोरी की ईंट' उपन्यास में दलितों के प्रति अशिक्षितों के अलावा पढ़े–लिखे लोगों में भी जातीय भेदाभेद दिखाई देता हैं। सैमुअल का लड़का जैकब एस.एल.सी. इम्तिहान में फर्स्ट डिविजन में पास होता है और अध्यापक दिलीप सिंह का बेटा थर्ड डिविजन मे पास होता है। परिणामत: दिलीप सिहं अपने बेटे को डाँटते हैं– ''वह भंगी का बेटा तो फर्स्ट ड़िवीजन मे पास हुआ है और तुम सुसरे, निकम्मे जमाने भर के राजपूतों के बेटे होकर भी थर्ड डिविजन में पास हुए हो।''[६] उक्त कथन से स्पष्ट होता है कि यहाँ पढ़े–लिखे लोगों की मनोवृत्ती का भंडाफोड़ किया गया है। प्रस्तुत उपन्यास का सुधीर इम्तिहान में हमेशा पहला आता है. परंतु जान उस स्कूल में पहला आने के उपरांत सुधीर इम्तिहान में दूसरा आता है। तब उसके पिताजी बहुत तीखी नजर से उसकी और देखकर पुछते हैं।

'' 'पहले स्थान पर कौन आया?'

'जान कार्नी लियस'

'कोई भंगी होगा या चमार सुसरों ने नाम भी कैसे–कैसे रख लिए है जैसे सीधे लंड़न से चले आ रहे हों।

कौन हे यह जान कार्नी लियस?'

'हमारे स्कूल के सैमुअल मास्साब है न, उनका पोता है, ईसापुर के बिशप साहब का बेटा

सैमुअल साहब तो भंगी है?'

अब तो ईसाई है।''

'' ईसाई होने से क्या होता है, भंगी तो भंगी ही रहेगा। यह मिशन वाले हमें नीचा दिखाने के लिए इन नीची जाति वालों को सिर पर चढा रहै है।''[७]

सुधीर के पिताजी सोचते हैं कि स्कुल ईसाई है, मास्टर ईसाई है। इसी कारण उन्होंने लडके को इम्तिहान में प्रथम कमांक दिया है। यहाँ सवर्णो की गंदी सोच पर प्रकाश डाला गया है। सुधीर के पिताजी जातिवादी मानसिकता के हिमायती है।

तेजिंदर के 'उस शहर तक' उपन्यास के आसना सर एक दिन क्लास में हाजिरी लेते हैं। हाजिरी के दौरान आसना सर पीलादास को यह सवाल करते हैं कि पीलादास नाम किसने रखा हैं? तब पीलादास बताता है कि यह नाम माँ ने रखा है। इस पर आसना सर कहते है कि तुम्हारे व्यक्तित्व का प्रभाव जैसा तुम्हारे नाम के साथ पड़ना चाहिए वैसा इस नाम सें नही पड रहा है। इस स्थिती में पीलादास चुप बैठता है, लेकिन क्लास के दुसरे बच्चे उसका मजाक उडाते हैं। एक लड़का मास्टरजी से कहता है–

''सर अगर यह अपना पुरा नाम बोलेगा तो उसका प्रभाव और पड़ेगा।''

'क्या?' आसना सर ने पुछा।

'पीलादास चमार।' लडके ने तुरंत जवाब दिया।

सारी क्लास खिलखिलाकर हँस पड़ी। पीलादास का चेहरा लटक आया।''[८] उक्त कथन से

स्पष्ट होता है कि, छोटे बच्चों की सोच भी जातीय भेदभाव से प्रभावित है।

प्रस्तुत उपन्यास का पुलिस अधिकारी हीरालाल चमार अपने अच्छे काम से दिल्ली में एक प्रभावशाली अधिकारी बन जाता है, परंतु इसके अच्छे कार्यों में उन्हें जातीयता नजर आती है। इस पर वाजपेयी कहता है– ''हीरालाल ने एक चमार होकर भी बढ़िया काम किया है।''[९] उक्त कथन से हमें दिल्ली जैसे बडे महानगर में जातिभेदभाव की दीवारें कितनी मजबुत हो सकती है, इसका संकेत मिलता हैं।

हिंदी उपन्यासों में चित्रित जातीय विषमता का विवेचन करने के पश्चात निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि, जातीय विषमता की समस्या को विवेच्य उपन्यासकारों ने चिंता का ही विषय नहीं बल्की चिंतन का विषय बनाया है। आज स्कूल–कॉलेज, पुलिस थाना, गाँव–कस्बों तथा दिल्ली जैसे महानगरों में जातियता का दर्शन होता है। आजादी के साठ साल बाद भी हमारे देश में जातीयता की दीवारें इतनी मजबूत बनी हुई हैं, कि उन्हे उखाडकर फेकना मुश्किल की बात है। इस समस्या के चलते आज भी दलित समाज अपने हक एवं अधिकारों से वंचित है। सोचनीय बात यहं हैं कि दलित समाज जब तक इस समस्या से छुटकारा नहीं पाएगा तब तक दलित समाज और राष्ट्र की उन्नती नाममात्र दिखावा होगा। राष्ट्र को एकता और अखंडता के सूत्र में बॉधने के लिए जातीय विषमता की दीवारें उखाडकर फेंकना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

१. डॉ. देवेश ठाकुर–मैला आँचल की रचना प्रक्रिया,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण:१९८७पृ.६८
२. जयप्रकाश कर्दम – छप्पर, राहुल प्रकाशन, दिल्ली, दू.सं. २००४, पृ.८२
३. प्रेम कपाडिया – मिट्टी की सौगंध, भारतीय सामाजिक संस्थान, नई दिल्ली, प्र.सं.१९९५, पृ. ४३
४. प्रेम कपाडिया – मिट्टी की सौगंध, भारतीय सामाजिक संस्थान, नई दिल्ली, प्र.सं. १९९५,पृ. १४
५. प्रेम कपाडिया – मिट्टी की सौगंध, भारतीय सामाजिक संस्थान, नई दिल्ली,प्र.सं.१९९५, पृ. १०९
६. मदन दीक्षित – मोरी की ईंट, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९९४ पृ.४८
७. मदन दीक्षित – मोरी की ईंट, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं.१९९४ पृ.१७९
८. तेजिंदर – उस शहर तक, ज्ञानभारती प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं. १९९७ पृ.१५
९. तेजिंदर – उस शहर तक, ज्ञानभारती प्रकाशन, दिल्ली, प्र.सं. १९९७ पृ.३९